लोक संगीत

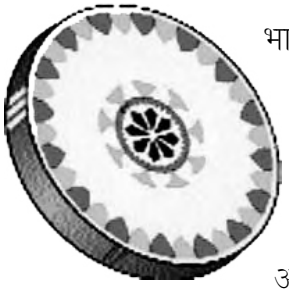

भारी सांस्कृतिक विविधता के कारण हमारे देश में लोक संगीत और लोक शैलियों की एक समृद्ध परंपरा रही है। हर इलाके की अपनी एक खास शैली है और हर शैली की अपनी अलग बन-ठन, अलग मिजाज़ है।

कुछ सांस्कृतिक इतिहासकारों की राय है कि जनजातीय अथवा आदिवासी संगीत को भी लोक संगीत की श्रेणी में रखा जा सकता है परंतु ऐसा सोचना गलत होगा क्योंकि ये दोनों विधाएं एक-दूसरे से बुनियादी तौर पर अलग हैं। जहां एक तरफ लोक संगीत व्यापक भारतीय समाज के स्पंदनों को प्रतिबिंबित करता है वहीं दूसरी तरफ जनजातीय संगीत इससे अलग कुछ विशिष्ट और सीमित दायरे में फैली संस्कृतियों की नुमाइंदगी करता है। हालांकि ये दोनों ही शैलियां सदियों के लंबे सफर में विकसित हुई हैं परंतु जनजातीय संगीत लोक संगीत से ज़्यादा पुराना है क्योंकि हमारे देश के आदिवासी या देशी समाज ही यहां के मूल निवासी थे। बहरहाल, जनजातीय और लोक संगीत, दोनों ही शैलियां पीढ़ी-दर-पीढ़ी हम तक पहुंची हैं। दोनों ही शैलियों में सीखने-सिखाने के औपचारिक तरीके या अवधि की व्यवस्था नहीं रही है। इसका अर्थ यह है कि संगीत की इन विधाओं से जुड़े लोग भारतीय शास्त्रीय संगीत के कलाकारों की तरह अपना पूरा जीवन संगीत को समर्पित नहीं करते क्योंकि जनजातीय एवं ग्रामीण जीवन परिस्थितियों में संगीत को औपचारिक ढंग से सीखना संभव नहीं है। जनजातीय और लोक संगीतकारों को संगीत के साथ-साथ शिकार, खेती-बाड़ी या अपने अन्य सामान्य कार्यों को भी करना पड़ता है जिसके कारण वह संगीत की शिक्षा-दीक्षा पर इतना ध्यान नहीं दे सकते।

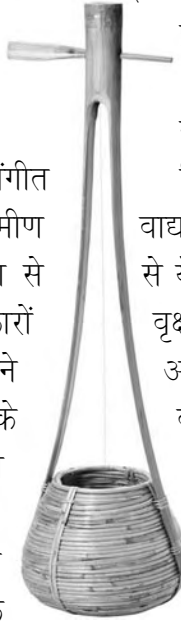

गांव/टोले के बड़े-बुजुर्ग जब खाली होते हैं तो युवाओं को अपने संगीत की बारीकियों से वाकिफ कराते रहते हैं और उन्हें शादी-ब्याह, सगाई, जन्म आदि सामुदायिक उत्सवों पर अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। जब खेतों में बुआई और कटाई होती है तब भी वहां संगीत की स्वर लहरियां सुनाई पड़ती हैं। इन मौकों पर ग्रामीण समुदाय के लोग गानों के ज़रिए ही अपनी उम्मीदों, अपने भय और अपनी आकांक्षाओं को अभिव्यक्त करते हैं। कुछ इलाकों में जब लड़की को पहली बार मासिक स्राव होता है तो उस समय लड़की को यह बताने के लिए भी गीतों का सहारा लिया जाता है कि अब वह एक परिपूर्ण औरत की ज़िंदगी में दाखिल हो रही है और आने वाले समय में उसे वैवाहिक दायित्वों का भी निर्वाह करना पड़ेगा।

लोक गीतों में इस्तेमाल होने वाले वाद्य यंत्र शास्त्रीय संगीत की दुनिया में पाए जाने वाले विकसित और परिष्कृत वाद्य यंत्रों से बिल्कुल अलग होते हैं। ज़्यादातर लोक संगीतकार ऐसे वाद्य यंत्रों का प्रयोग करते हैं जिन्हें संगीतकारों ने खुद ही बनाया होता है। लोक संगीतकार जिन यंत्रों का प्रयोग करते हैं उनमें *डफ, ढोलक, नाल, नगाड़ा, इकतारा/दोतारा, सारिंगदा, रबाब, संतूर और पेंकली* आदि प्रमुख हैं (अलग-अलग इलाके की बोली या भाषा के हिसाब से इन वाद्य यंत्रों के नाम अलग-अलग भी हो सकते हैं)।

किसी इलाके की किसी खास लोक शैली में अनगिनत वाद्य यंत्र इस्तेमाल होते पाए जा सकते हैं। सामान्य रूप से ये लोक वाद्य यंत्र स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पशु-चर्म, वृक्षों की छाल, पेरीटोनियम, बांस, नारियल के खोल, घड़े आदि से बनाए जाते हैं। लोक संगीत के कुछ महत्वपूर्ण वाद्य यंत्र हैं— *बांसुरी, चिमटा, डफ, ढोलक/ढोलकी, इकतारा/दोतारा, गेडूवाद्यम, घाटम, घुंघरू, खड़ताल, खौल, मगादी वीणा, मरचंग, नगाड़ा, नकुला, पुंग, पुंगी, रबाब, संतूर, शंख, गोपीचंद, थंथी पनाई, पेना, डमरू, इडक्का, उडाकू।*